दूध की बढ़ती कीमतें नहीं, हमारी चिंता शेयर बाजार है

दूध की बढ़ती कीमतें अब हमें नहीं डराती हैं। इस बढ़ोत्तरी पर हम कोई विमर्श नहीं करते हैं। हमारा सारा विमर्श का केन्द्र शेयर बाजार है। कौन सा पूंजीपति डूब रहा है, इस पर हम चिंता में घुले जा रहे हैं। ऐसा नहीं है कि शेयर मार्केट की चिंता नहीं करना चाहिए लेकिन पहले तय तो हो कि जीवन के लिए दूध जरूरी है कि शेयर ? क्या हम मान लें कि एक साथ तीन रुपये दूध की कीमत में बढ़ोत्तरी कोई माथे पर सलवटें नहीं डालती हैं ? क्या हम मान लें कि रोजमर्रा की महंगाई से दो-चार होने को हमने स्वीकार कर लिया है ? क्या हम मान लें कि दूध से ज्यादा जरूरी है कि शेयर मार्केट उठ रहा है या गिर रहा है ? शायद इस समय का सच यही है कि हमने दूध, सब्जी, किराना और इसी तरह की दिनचर्या की जरूरी चीजों की महंगाई को महंगाई नहीं मान रहे हैं। बढ़ती महंगाई के लिए सत्ता और शासन को हम दोषी बताकर किनारा कर लेते हैं लेकिन जिन्हें शायद कल सत्ता और शासन सम्हालने का अवसर मिले, वे भी खामोश हैं। उनकी चिंता में भी दूध नहीं, शेयर मार्केट की मंदी और उछाल है।

हिडनबर्ग की रिपोर्ट के बाद कारोबारी खानदान की चूलें क्या हिली, पूरा समाज चिंता में डूब गया। सबको लगने लगा कि यह खानदान डूबा तो हम सब डूब जाएंगे। शायद यह सच भी हो सकता है लेकिन इससे बड़ा सच एक यह है कि सवा सौ करोड़ के इस महादेश में मध्यमवर्गीय परिवारों से एक मोटे अनुमान से दो-पांच प्रतिशत लोग होंगे जिनकी रूचि शेयर मार्केट में है और उनका पैसा शेयर में लगा हो लेकिन 99 फीसदी परिवार दूध का उपयोग करता है, इस बात से इंकार नहीं होना चाहिए। अब आप खुद अंदाज लगाइये कि चिंता 99 फीसदी लोगों की होनी चाहिए या उन दो-पांच परसेंट लोगों की। लेकिन हम बेफ्रिक हैं और यह मानकर चल रहे हैं कि यह सब चलता रहता है। कोराबारी खानदान के साथ अन्य कई कम्पनियों के शेयर के भाव औंधे मुंह गिरे तो बात लाखों करोड़ तक जा पहुंची। यह आम चर्चा का विषय हो गया कि अब तो सब कयामत आने वाली है। लेकिन तीन रुपये दूध की कीमत बढ़ जाने से किसी को उन हजारों-हजार परिवार के दूधमुंहे बच्चों की चिंता नहीं हुई जिनका निवाला छीना जा रहा है।

बहुत पुराना तो याद नहीं लेकिन हर्षद मेहता के बाद से कुछ और ऐसी घटनाएं घटी हैं जिसने अर्थव्यवस्था पर असर डाला है। हर्षद मेहता के समय भी और उसके बाद भी आम आदमी को कोई फर्क नहीं पड़ा। तब शायद मीडिल क्लॉस शेयर मार्केट को ना जानता था और ना उसकी हिम्मत थी कि वह ऐसी जगहों पर पैसा इनवेस्ट करे। इसे सीधे शब्दों में समझना चाहें तो कह सकते हैं कि तब आम

आदमी की लालच का ग्राफ नियंत्रण में था। अपनी जीवन भर की कमाई को अधिक से अधिक वह एफडी बनाकर रख देता था। लेकिन आज मामला एकदम उलट है। क्या खास और क्या आम, सब लालच की डोर में ऐसे लिपटे दिख रहे हैं कि रातों रात लखपति बन जाना चाहते हैं। और ऐसे सपनों को पूरा करने के लिए उनके पास एक शॉर्टकट बचता है शेयर मार्केट। ऐसे में जब कोई गड़बड़ी उजागर होती है तब शेयर मार्केट में उछाल या मंदी छा जाती है और सबसे नुकसान में वह मिडिल क्लास होता है जिसके सपनों की डोर शेयर से बंधी होती है। ऐसे में डिप्रेशन, हॉटअटैक और मनोरोगियों की तादात में बढ़ोत्तरी हो जाए तो कोई हैरानी नहीं होना चाहिए। एक आम आदमी का शेयर मार्केट में पैसा डूबता है तो वह सडक़ पर आ जाता है लेकिन एक पूंजीपति को इससे कोई खास फर्क नहीं पड़ता है।

हैरानी में डाल देने वाली बात तो यह है कि हर्षद मेहता प्रकरण के बाद से जितने भी कांड हुए हैं, उसे देखने के बाद भी आम आदमी ने कोई सीख नहीं ली। शायद वह दांव पर अपनी कमाई लगा देना चाहता है और जैसा कि होता आया है, मरना, मिटना और तबाह होना उसे ही है। शेयर मार्केट व्यापार नहीं है बल्कि सपनों की दुनिया है और जैसा कि दुनिया का हर देश भारत के बाजार की ओर आस भरी नजरों से देख रहा है तब उसका भी टॉरगेट आम भारतीय ही होता है। उसे पता है कि 'फ्री गिफ्ट' आम आदमी को लुभाता है। यह और बात है कि उसके एवज में उसे दुगुना देना पड़ता है। सोशल मीडिया में रिल्स ने तो आम आदमी को शॉर्टकट में कुछ सेकंड में अमीर बनने का नुस्खा बताकर चला जाता है। एक ऐसा ही उदाहरण याद आता है कि एक व्यक्ति, दूसरे से पूछता है कि तुम रोज कितना शराब पीते हो और उसे बताता है कि बीस साल में तुमने इतने की शराब पीकर पैसा खर्च कर दिया। ऐसा नहीं करते तो तुम्हारे पास ऑडी कार होती। तब वह आदमी पलटकर पूछता है कि तुम तो शराब नहीं पीते, फिर तुम्हारी ऑडी कार कहां है ? ऐसे सलाहकारों की बड़ी भीड़ है जो शिकारी की तरह आपको उलझाती है। यह ठीक है कि शराब से पैसा ही नहीं, सेहत भी खराब होती है और शराब नहीं पीना चाहिए। मजेदार बात तो यह है कि दूध की बढ़ती कीमत पर रिल्स पर कोई वीडियो, कोई मोटीवेशनल स्पीच या कोई चिंता नहीं दिख रही है।

जिस बाजारवाद को लेकर एक दशक पहले छाती पीटा जा रहा था, आज वह बाजारवाद हमारी जीवनशैली बन चुका है। कभी तीज-त्योहार पर नए कपड़े खरीदने का चलन था, अब रोज उत्सव हो रहा है। छूट और फ्री ने हर आदमी को उपभोक्ता बना दिया है। युवा वर्ग दो-पांच सौ रुपयों की कॉफी पीने का आदी हो चुका है। पिजा-बर्गर की कीमत के सामने उसे महंगा दूध क्यों बैचेन करेगा ? उसके लिए तीन रुपये ही तो है। कभी कहते थे कि सिक्के की चमक के आगे अंधेरा छा जाता है, आज शेयर मार्केट के सामने अंधेरा छा गया है। (लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं शोध पत्रिका 'समागम' के सम्पादक हैं)